Year-9-10; 2018-19
ISSN–2231-1130

Impact Factor – 3.521(IIJIF)
●●●●VEETHIKA●●●

कालिदास की रचनाओं के आधार पर गुप्तयुगीन महिलाओं का धार्मिक जीवन

महेंद्र कुमार वर्मा*

मानव सभ्यता की उत्पत्ति के समय से ही धर्म किसी न किसी रूप में अस्तित्व में रहा है। पूर्व ऐतिहासिकयुग की संस्कृतियों में धार्मिक क्रियाकलापों के सूक्ष्म अवशेष प्राप्त होते है। किन्तु वैदिक युगीन संस्कृतियों एवं उसके बाद के काल में धार्मिक क्रियाकलापों में उत्तरोत्तर वृद्धि देखने को मिलती है। उत्तर वैदिक काल में धार्मिक कर्मकाण्डों में वृद्धि के फलस्वरूप समाज में प्रतिक्रिया स्वरूप दो नये सम्प्रदायों बौद्ध एवं जैन का उदय हुआ। धार्मिक दृष्टिकोण से शुंग, सातवाहन युग में अनेक महत्त्वपूर्ण परिवर्तन हुए। शुंग युग का प्रारम्भ बौद्ध धर्म के व्यापक विरोध एवं वैदिक धर्म के पुनरुत्थान के साथ हुआ। किन्तु इस काल में वैदिक धर्म को पुनः जिस रूप में जीवित करने का प्रयास किया जा रहा था, वह संभव नही था। क्योंकि बौद्ध एवं जैन धर्म के रूप में वैदिक धर्म के विरुद्ध जो प्रतिक्रिया हुई थी उसका प्रभाव वैदिक धर्म पर पड़ना स्वाभाविक था। बौद्ध एवं जैन मतों में आक्षेपों का उत्तर देने के लिए वैदिक धर्म में कई तार्किक परिवर्तन हुए। इस समय प्राचीन धर्म को न केवल नवीन मत प्राप्त हुआ अपितु बौद्ध धर्म में भी एक नवीन सम्प्रदाय महायान का उदय हुआ। वैदिक धर्म में भक्ति प्रधान वैष्णव, शैव सम्प्रदायों का उदय हुआ। वैष्णव और शैव धर्मों में भक्ति को विशेष महत्त्व दिया गया है। भक्ति का अर्थ अपने इष्टदेव के प्रति अनन्य प्रेम और आत्मसमर्पण का भाव है। भक्ति की यह भावना केवल शैव, वैष्णव धर्म तक ही सीमित नही रही अपितु बौद्ध एवं जैन धर्मो पर भी इसका प्रभाव पड़ा।

समकालीन समाज में महिलाओं का सम्मानित स्थान था। समाज में होने वाले धार्मिक क्रियाकलापों में उनकी भागीदारी होती थी। कालिदास की विभिन्न कृतियों के अध्ययन करने से पता चलता है कि ऋषि कण्व के आश्रम में पुरुष तपस्वियों के साथ–साथ तापसी बालाएँ भी रहती थी। पूजा पाठ के लिए पुष्पों आदि का प्रबन्ध करती थीं। तत्कालीन समाज में यज्ञ का धार्मिक कर्मकाण्डों में प्रमुख स्थान था। यज्ञ करने के लिए गृहस्थ व्यक्ति को हवि अपनी पत्नी के साथ ही देनी होती थी। रघुवंशम् में वर्णित है कि राम ने यज्ञ करने के समय अपनी पत्नी सीता की अनुपस्थिति में उनकी सोने की मूर्ति को अपने पास रखवाया था, तत्पश्चात् अपना याज्ञिक कार्य पूर्ण किया था। समाज में होने वाले धार्मिक कार्यो में महिलायें पुरुषों के साथ भाग लेती थीं। रघुवंशम् से ही विशाल नितम्ब वाली मदोन्मत चकोर के समान चंचल नेत्र वाली सलज्ज इन्दुमती के ब्रह्म के समान पुरोहित के कहने पर अग्नि में लावा के हवन किये जाने का वर्णन मिलता है। अभिज्ञानशाकुन्तलम् में कण्व ऋषि अपनी पुत्री शकुन्तला से आहुति द्वारा पूजित अग्नि की प्रदक्षिणा करने को कहते हैं और कामना करते हैं कि ए `सी यज्ञाग्नि तुम्हें भी पवित्र करे। अभिज्ञानशाकुन्तलम् में ही प्रजापति कश्यप के अपनी पत्नी के साथ हेमकूट पर्वत पर तपस्या किये जाने का वर्णन प्राप्त होता है। महिलाओं के द्वारा व्रत, पूजा, पाठ किये जाने का वर्णन नाटक के अन्त में मिलता है। जब राजा शकुन्तला को देखकर कहता है। 'यही वे मान्या शकुन्तला है जिन्होनें मलिन वस्त्र धारण कर रखे है। व्रत, उपवास आदि के कारण जिनका मुख कुम्हला गया है। कालिदासकृत मेघदूतम् से भी महिलाओं के धार्मिक जीवन के विषय में पता चलता है। यक्ष मेघ को अपनी प्रियतमा के विषय में बताते हुए कहता है। 'हे मेघ! वह मेरी प्रियतमा देव पूजाओं में लगी हुई होगी। कुमारसंभव महाकाव्य में उमा द्वारा अपनी इच्छानुसार वर प्राप्त करने के लिए तप, पूजा, पाठ किये जाने का वर्णन मिलता है। कालिदास ने उमा के तप का जो वर्णन किया है वह निःसंदेह असीम सहनशक्ति का परिचय देता है। वह गर्मी में पंचाग्नि तापती हैं। सर्दियों में बर्फीली हवाओं और जल में खड़ी रहती हैं। बरसात में नंगी शिलाओं पर शयन करती हैं। मूंज की मेखला पहनती हैं। जिस प्रकार वृक्ष केवल जल का आहार करते है उसी प्रकार पार्वती भी सारे आहार छोड़कर केवल जल का ही आहार करने लगती हैं उसकी इस प्रकार की कठिन तपस्या को देखकर बड़े–बड़े तापस भी लजा जाते हैं। जब शक्ति के अनेक कृत्य अनेकधा संपन्न हुए है, तब सभी देवताओं की शक्तियाँ ए कत्र संयुक्त हो गयी और सप्तमातृका कही गयीं। उनके अलग–अलग अनेक नाम ब्राह्मणी, माहेश्वरी, कौमारी, वैष्णवी, वाराही, इन्द्राणी और यमी अथवा चामुण्डा देवताओं से ही सम्बन्धित रहे हैं। संयुक्त रूप से वे उनसे सर्वथा भिन्न हो गयी, उनकी शक्ति आत्मसात् कर संयुक्त रूप से वे उनसे विच्छिन्न अपनी संयुक्त शक्ति से दीप्तिमती सप्तमातृकाओं का एकत्रण कुषाण काल में ही हो चुका था। कालिदास संयुक्त रूप से इन्हे मातरः कहते हैं। महिलाओं के विषय में कुमारसंभव में वर्णित है कि साधु स्वभाव की पत्नियाँ ही सभी प्रकार के धार्मिक कृत्यों का मूल कारण होती हैं।

समकालीन समाज में पशु पूजा के रूप में गाय की पूजा का वर्णन रघुवंशम् में मिलता है। राजा दिलीप के द्वारा अपनी पत्नी सहित महर्षि वसिष्ठ के कहने पर

*शोध छात्र, लखनऊ विश्वविद्यालय

नन्दिनी गाय की सेवा करने का विवरण मिलता है। समाज में सूर्य व चन्द्रमा की पूजा के विषय में भी पता चलता है। कालिदास कृत विक्रमोर्वशीयम् में महारानी काशिराज पुत्री के द्वारा विभिन्न प्रकार की पूजा सामग्री से सूर्य व चन्द्र किरणों की पूजा किये जाने का वर्णन मिलता है। समाज में धार्मिक क्रियाकलापों में महिलाओं की भागीदारी थी। व्रत, पूजा, पाठ आदि के अलावा धार्मिक उपासना की अनेक परम्परायें प्रचलित थीं।

पूजा–पाठ एवं धार्मिक कृत्यों के लिए भारत में जब मंदिरों का निर्माण हुआ। तब उनके ऐश्वर्य में वृद्धि के लिए अनेक प्रकार के कार्य किये गये। उनमें से एक पूजा–पाठ करने के लिए दीप आदि प्रज्वलित करने के लिए, मंदिरों की साफ–सफाई करने के लिए, नृत्य, संगीत के द्वारा स्तुति करने के लिए बालिकाओं की नियुक्ति हुई। यही देव–दासी कहलायीं। मेघदूतम् तथा अनेक पुराणों में इसके विषय में उल्लेख मिलता है। उज्जयिनी के महाकाल मन्दिर में अनेक दासियों के नृत्य–गान आदि में व्यस्त रहने का वर्णन कालिदास ने किया है। पुराणों में उल्लिखित है कि मन्दिर की सेवा के लिए अनेक सुन्दरियों को क्रय करके प्रदान करना चाहिए। कभी–कभी निःसंतान व्यक्ति अपनी पहली संतान मन्दिर को दान कर दिया करते थे। कालान्तर में यह प्रथा और विकसित होती चली गयी। समाज में धार्मिक क्रियाकलापों के अन्तर्गत लोगो द्वारा धार्मिक अनुदान दिये जाने का भी प्रचलन था। जिसका उल्लेख समकालीन शासकों के अभिलेखों में मिलता है। वाकाटक अभिलेखों से राजपरिवार की महिलाओं के द्वारा भेंट अनुदान दिये जाने के विषय में पता चलता है। प्रभावती गुप्ता ने कई अनुदान दिये। प्रवरसेन द्वितीय के मसौदा अभिलेखों में दिये गये अनुदान उसकी प्रधान रानी के आग्रह पर ही निर्गत किये गये थे। फाश्यैन ने खोतान और पाटलिपुत्र में बौद्ध प्रतिमाओं के साथ निकलने वाले दो धार्मिक जुलूसों की विशेष चर्चा की है। जिसमें रथों और बौद्ध प्रतिमाओं को सजाकर विशेष रुप से वेश–कीमती रत्नों, रेशमी ध्वजों और छत्रों के साथ महायान सम्प्रदाय के भिक्षुओं के द्वारा जुलूस निकाला जाता था। राजा–रानी तथा अन्य शाही परिवार की स्त्रियों के द्वारा इन पर पुष्पों का छिड़काव किया जाता था।

समकालीन समाज में मूर्तियों का निर्माण कर उन्हे अपने इष्टदेव का प्रतीक मानकर उसकी उपासना की जाती थी। भगवतशरण उपाध्याय ने लिखा है। कि संसार में मूर्ति का प्रतीक जितना शक्तिशाली रहा है उतना अन्य कोई प्रतीक नहीं रहा है। त्रास और कूतूहल से ही भगवान् और धर्म का उदय हुआ है। मातृ सत्तात्मक कुल परम्परा से भिन्न मानव की सर्वशक्तिमती माता ही प्रथम देवता बनी। मातृदेवी की मूर्तियाँ ही इसी कारण सर्वत्र पहले मिली हैं। जननेन्द्रिय की जनन शक्ति ने फिर लिंग पूजा का सूत्रपात किया। भारत के इतिहास में मूर्ति उतनी ही पुरानी है जितना उसका जाना हुआ इतिहास।

भारत में मूर्तिकला के प्राचीनतम नमूने 'सिन्धु घाटी सभ्यता' से प्राप्त हुए हैं। ब्राह्मण धर्म में देवी–देवताओं की मूर्तियाँ व्यापक पैमाने पर सम्भवतः मौर्यकाल के पश्चात् बनीं। मौर्योत्तर काल में इनका विकास हुआ। उत्तर प्रदेश के ललितपुर जिले में देवगढ़ का दशावतार मन्दिर है। इस गुप्तकालीन मंदिर में अंकित शेषशायी विष्णु की मूर्ति 'मूर्तिकला' की दृष्टि से अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। इसमें उनके चरणों के समीप विष्णु की अर्धांगिनी लक्ष्मी प्रदर्शित है।

इस प्रकार कालिदास के ग्रन्थों का अध्ययन करने से समकालीन गुप्त युग में महिलाओं के द्वारा व्रत, पूजा, पाठ, तप आदि किये जाने का वर्णन मिलता है। पुरुषों के साथ महिलाओं को भी यज्ञादि में भागीदारी का अवसर प्राप्त था। महिलायें आश्रम में पुरुषों के साथ धार्मिक क्रिया कलापों में भाग लेती थी। परिवार में पत्नी को सभी प्रकार के धार्मिक कृत्यों का मूल कहा गया है। विक्रमोर्वशीयम् से ज्ञात होता है कि समकालीन समाज में तपस्वी स्त्रियों का बड़ा आदर होता था। राजा द्वारा तपस्विनी को माता कहकर प्रणाम करने का वर्णन मिलता है। स्त्रियों के द्वारा धार्मिक अनुदान दिये जाने का वर्णन मिलता है। जिसकी झलक समकालीन अभिलेखों में देखने को मिलती है। गुप्तयुगीन मूर्तियों को देखने से भी समकालीन समाज में महिलाओं का धार्मिक मामले में सम्माननीय स्थान सूचित होता है।

सन्दर्भ

1. अभिज्ञानशाकुन्तलम्, संपादक वेद प्रकाश शास्त्री, चौखम्भा प्रकाशन, वाराणसी, 2015, 18 पृ.26
2. रघुवंशम्, 61 पृ. 515
3. वही, 25 पृ. 215
4. अभिज्ञानशाकुन्तलम्, 10 पृ. 205
5. मेघदूतम् 22 पृ. 184
6. कुमारसंभव, 60 पृ. 32
7. बंदोपाध्याय, राखालदास, गुप्तयुग, 1970 पृ. 344
8. उपरोक्त, पृ. 340
9. विक्रमोर्वशीयम् , 24 पृ. 164
10. रघुवंशम, पृ. 36
11. मेघदूतम्, 1 पृ. 35

12. पद्मपुराण, 52.97 क्रीतादेवाय दातव्या धीरेणम्लिष्यकर्मणा। कल्पकालं भवेत्सवर्गो नृपौ वासौ महाधनी।।
13. सिंह, उपिंदर, प्राचीन एवं पूर्व मध्यमालीन भारत का इतिहास, 2017 पृ. 544
14. उपरोक्त, पृ. 560
15. उपाध्याय, भगवतशरण, गुप्तकाल का सांस्कृतिक इतिहास, पृ. 164
16. कुमारस्वामी, ए.के, हिस्ट्री ऑफ इण्डियन एण्ड इण्डोनेशियन आर्ट, पृ. 85–86
17. विक्रमोर्वशीयम् , 24.164
18. रघुवंशम् , 80 पृ. 36